Journal
of the
Oriental Institute
M.S. University of Baroda
ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

" हिन्दी साहित्य में आदिवासी स्वर : एक चिन्तन "

शोध निर्देशक - डॉ. कांतिलाल यादव (सह-आचार्य) हिन्दी विभाग,

माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राज.)

शोधार्थी - श्री हरिप्रकाश परमार, हिन्दी विभाग

माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राज.)

सारांश – हिन्दी साहित्य में स्त्री-विमर्श एवं दलित-विमर्श के बाद एक नया विमर्श हमें देखने को मिलता वह है, आदिवासी विमर्श | आदिवासी विमर्श आदिवासियों के लिये अस्मितावादी विमर्श है | वास्तविक रूप से देखा जाये तो आदिवासियों के प्रति नफरत व उनके अधिकारों के प्रति जागरूक,सजग न करने का अधिकतर कार्य किसी ने किया है तो उन क्षेत्रवासियों / रहवासियों / शरणार्थियों ने किया हैं | एक वह समय था जब आदिवासी अपने स्वयं की भूमि पर खेती करके अपना जीवन - यापन कर रहा था | जिन आदिवासियों के बदौलत पूरे भारत वर्ष की कृषि एवं कृषि के सहायक उधोग-धंधों से ही सम्पूर्ण भारत की अर्थव्यवस्था निर्भर करती थी | लेकिन आज आदिवासियों के हाथों से यह अर्थव्यवस्था की भागीदारी निकल चुकी है |

आज औधोगिकीकरण एवं व्यावसायिकरण से आदिवासियों के जीवन पर संकट मंडरा रहा हैं | पूंजीपति वर्ग उनकी जमीन हड़प रहा है , वे पूंजीपति वर्ग से अपने हक़ एवं अधिकारों से लड़ता है तो उसे क़ानून का डर दिखाकर डराया - धमकाया जाता है | फिर भी नहीं डरता है तो उसे नक्सलवादी ,देशद्रोही , बर्बर , असुर , राक्षस ,शुद्र , जंगली आदि कहकर उसे प्रताड़ित किया जाता है | इससे भी नहीं माने तो झूठे व संगिन अपराधों में फंसाकर जेल में बन्द कर दिया जाता है | आदिवासियों के अपने स्वयं के हक़ अधिकारों को प्राप्त करने के लिये वह किसी के भी दरवाजे पर दस्तक दे उस आदिवासी का भला कोई नहीं करना चाहता है | सभी जगह पर वह सही होते हुए भी उस आदिवासी को ही झूकना/समझौता करना पड़ता है | आखिर ऐसा क्यों ? आदिवासी सम्पूर्ण भारत-भूमि का मालिक होते हुए भी उसे आज तक मालिकाना हक़ नहीं मिला ऐसा क्यों ? जबकि प्रकृति के संरक्षण व संवर्धन में भी आदिवासियों का ही योगदान है | आज आदिवासियों की जमीनों से कीमती धातुओं का दोहन रात - दिन किया जा रहा है | कहीं - कहीं पर तो आदिवासियों को उनकी मजदूरी का हिस्सा भी नहीं मिल पा रहा है | उन्हें ऐसे स्थानों से विस्थापित किया जा रहा है | आज तो आदिवासियों को जंगलों से भी भगाया जा रहा है | जंगलों पर भी पूंजीपतियों की ही नजरें हैं | आखिर आदिवासी के लिये कोई भी जगह नहीं रही है | अब आदिवासी अकेलापन महसूस कर रहा हैं | एक समय था जब सभी वर्गों के लोगों को आदिवासियों ने ही पनाह दी थी | आज उसी आदिवासी को लाचार व बेबस जीवन जीना पड रहा हैं | आज वह अपने ही खून के आंसू पीकर रह गया हैं | आदिवासियों की यह सहनशीलता आखिर कब तक रहेगी ? इसका जवाब तो शायद यह प्रकृति ही

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

दे सकती है क्योंकि आदिवासी प्रकृति की उपासना करता है वह प्रकृतिवादी है | और वह सच्चे अर्थों में प्रकृति की अनुभूति को समझता हैं | शायद , अब उसका न्याय यह प्रकृति/कुदरत कर सकें | वह उस प्रकृति/कुदरत से उम्मीद लगाकर बैठा हैं |

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्य में आदिवासी स्वर के अंतर्गत आदिवासियों के जल , जंगल व जमीन की रक्षा के साथ अपने समुदाय की रूढ़ियों , परम्पराओं , संस्कृति तथा सभ्यता का संरक्षण एवं संवर्धन हैं | आज का आदिवासी अपनी सभ्यता व संस्कृति के साथ किसी अन्य की सभ्यता एवं संस्कृति को पनाह नहीं देना चाहता हैं | वह अपने पूर्वजों (बाबा-डोकरों) की संस्कृति को जिन्दा रखना चाहता है | उसे आज भी मालूम है कि वह सभी समाजों से भिन्न हैं तथा उनके पूर्वज किस तरह से अपना जीवन व्यतीत करते थे | वह उनकी ही पुनरावृत्ति चाहता हैं | उसे भौतिक सुख -सुविधाओं से तनिक भी लेना - देना नहीं है | लेकिन आज के युवा वर्ग आदिवासियत से भटक गये हैं , पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति की ओर रुख कर रहे हैं | यह आदिवासियों की आदिवासियत शुद्ध संस्कृति को दूषित कर रहे हैं | अगर इसी तरह आदिवासी दूसरों की सभ्यता व संस्कृति का अनुशरण करेंगे तो एक दिन अपनी अलग पहचान आदिवासियत को खत्म कर सकते हैं | जिससे पूरे आदिवासी समुदाय पर संकट आ सकता है | अगर आदिवासी ने अपनी आदिवासियत खो दी तो उसे जल , जंगल व जमीन से भी मालिकाना हक़ भूलना पड सकता हैं | यह हक़ उसे आदिवासी होने और प्रकृतिवादी बने रहने तक ही सीमित हैं | आज वर्तमान में कई धार्मिक संस्थाएं आदिवासियों को उकसाने का कार्य कर रही हैं | यह आदिवासियों के संभलने का समय है | क्योंकि आज आदिवासियों में भी दो वर्ग बन गये हैं , आदिवासी और हिंदू आदिवासी | दोनों अपने मत-मतान्तरों द्वारा अपनी अलग - अलग विचारधाराओं का समर्थन करते हैं |

आदिवासी सभी प्रकृति पर रहने वाले जीव–जन्तुओं के साथ समानता का व्यवहार करता है तथा सभी जीवों को 'जिओ और जीने दो' के सिद्धांत का समर्थन करता हैं | लेकिन कुछ स्वार्थी लोगों को यह सिद्धांत सही नहीं लगता हैं वे सभी को ख़त्म करके जीना चाहते है लेकिन यह संभव नहीं है | हमें सभी के साथ सामंजस्य रखकर जीना होगा | अन्यथा केवल अकेला और स्वार्थी मनुष्य भी प्रकृति के साथ लम्बे समय तक जिन्दा नहीं रह सकता हैं | हमें प्रकृति को साथ लेकर आगे बढ़ना होगा अन्यथा सभी का विनाश हो सकता है | प्रकृति को साथ लेकर जीने की विचारधारा केवल आदिवासी के आदिवासियत में ही हमें देखने को मिलती हैं | आज की आदिवासी विरोधी एवं पूंजीवादी सरकारे पूंजीपतियों के ईशारों पर कार्य करके आदिवासियों को खत्म करना चाहती हैं | आदिवासियों को जल व जंगल से भी भगाना चाहती है | लेकिन ऐसी सरकारों को याद रखना चाहिए कि अगर कोरोना जैसी महामारी आयेंगी तो कोई भी सुरक्षित नहीं रह पायेगा | इसलिए हमें प्रकृति की रक्षा करते हुए प्रत्येक जीवों का संरक्षण एवं संवर्धन करना होगा तब ही हम सब सुरक्षित रह सकते हैं |

आदिवासी की चिंता जल, जंगल, जमीन, भाषा और संस्कृति की है जो आदिवासी अस्मिता के लिए आवश्यक है । आदिवासी को सहज ही असभ्य और बर्बर समझ लिया जाता है । उसकी

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

सभ्यता और संस्कृति को ना तो समझने की कोशिश की जाती है और ना ही उसके साथ सहृदयता के साथ व्यवहार किया जाता है । बाहरी स्वरूप और आवरण के आधार पर परिभाषा गढ़ दी जाती है, जो यथार्थ से बिल्कुल दूर की बात होती है | आदिवासी देश के मूल मालिक माने जाने वाले तमाम आदिम समुदायों का सामूहिक नाम है । इस संदर्भ में यह विचारणीय है कि आदिवासी पद का 'आदि' उन समुदायों के आदिम युग तक के इतिहास का प्रतीक है |

आर्यों के आने से पूर्व भारत के घने जंगलों में पर्वतों - पहाड़ों में , दर्रों -घाटियों में आदिवासी अपना जीवन जी रहे थे | जंगलों में आदिवासियों की ही सत्ता हुआ करती थी | जंगलों से उन्हें कई लाभ भी थे | फल - फूल, लकड़ी, और शिकार के लिए उसे किसी से स्वीकृति लेने की आवश्यकता नहीं थी । लेकिन खैबर दर्रे से जब आर्य भारत आए तो वे अपने साथ रथ, बर्छी, कुल्हाड़ी, गाय, घोड़े, ढोरों की फौज लेकर आए और पहला हमला उन्होंने आदिवासियों पर किया। इस तरह गोरे आर्यों ने काले आदिवासियों को अपने अधीन कर लिया । चमड़ी का रंग वर्ण का स्वीकृत अर्थ हो गया और यह चीज जिसे भारतीय इतिहास का आरंभ कहा गया उसकी आधारशिला बन गई। आर्य अपने पास उपलब्ध घोड़ों और शस्त्रों के बल पर आदिवासियों के जंगल व जमीन पर अतिक्रमण करने लगे तथा उन्हीं के जंगलों और जमीनों से उन्हें बेदखल करके बाहर निकालने लगे । आर्य यज्ञ करते थे और यह 'हिस्सा हमारा हुआ' ऐसी घोषणा करते थे । आदिवासियों के प्रतिकार करने पर उन्हें असुर, राक्षस,बर्बर,शुद्र आदि कहकर मार देते थे। आर्यों के आगमन के पश्चात् ही सही अर्थों में आदिवासियों की दुर्दशा का काल प्रारंभ हुआ । सैकड़ों वर्ष बीत गए पर आज भी अधिकांश आदिवासी जंगलों, वनों और गिरिकुहरों के समूहों में रहकर जीवनयापन कर रहे हैं।

आज आदिवासी शब्द के उच्चारण से ही अनेको बिंब सहज ही हमें देखने को मिलते हैं | प्रत्येक सदी से आदिवासियों के साथ छल-कपट किया सताया एवं सोची – समझी साजिश के तहत उन जंगलों से भगाया तथा जगलों पर भी उन आर्यों ने अधिकार कर लिया | वह मनुष्य जो अपनी स्वतंत्र परम्परा सहित , सहस्त्र वर्षों से घने जंगलों में रहने वाला मनुष्य आदिवासी ही हैं जो एक विशेष पर्यावरण में अपनी सामाजिक तथा सांस्कृतिक मूल्यों को जान की कीमत पर संजोये, प्रकृतिनिष्ठ, प्रकृति पर निर्भर, कमर पर पत्ते/बित्ते भर चिंदी लपेटे हुए, पीठ पर आयुध लेकर, लक्ष्य की खोज में शिकारी बना तथा मारा - मारा जंगलों में भटक कर इतराने वाला यह कर्तव्यशील मनुष्य, परंतु वर्तमान में लाचार, अन्यायग्रस्त तथा पशुवत् जीवन यापन करने वाला मनुष्य आज वेदना में डूबा हुआ है |

साहित्य का अवलोकन – वर्तमान में आदिवासी साहित्य एवं आदिवासी विषय पर अनेक साहित्यकारों / रचनाकारों के द्वारा लिखा जा रहा हैं लेकिन मुख्यधारा का साहित्य आज भी आदिवासी साहित्य के

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

प्रति खामोश ही रहा हैं | आदिवासी मुद्दों पर आलोचनात्मक सृजनात्मक साहित्य लेखन करने वालों की एक अलग धारा बन चुकी हैं जिनमें रोज करकेट्टा , वंदना टेटे , हांसदा सोवेंद्र शेखर ,ममांग दाई , निर्मला पुतुल ,राम दयाल मुंडा , जयपाल सिंह मुंडा , हरिराम मीणा , गंगा सहाय मीना , पंडित रघुनाथ मुर्मू , जनकसिंह मीना , ग्रेस कुजूर , डॉ. रमेश चंद मीना , डॉ. केदार प्रसाद मीना , डॉ. गजेन्द्र मीना , डॉ. कुलदीप सिंह मीना तथा अन्य साहित्यकारों ने आदिवासियत पर बहुत ही आकर्षक लेखन कार्य करके आदिवासी साहित्य का सृजन किया हैं | इन सभी साहित्यकारों के अथक प्रयासों का परिणाम है कि आज हिन्दी साहित्य में आदिवासी - विमर्श की एक नई धारा उभरी है | साथ ही इन सभी साहित्यकारों की वजह से हिन्दी साहित्य में आदिवासी-विमर्श अब अपना निश्चित स्थान बना चुका है |

अध्ययन का उद्देश्य – वर्तमान में आदिवासी समाज , भाषा , संस्कृति , समस्याओं , प्रतिरोध और आदिवासी समाज से सम्बन्धित अन्य मुद्दों पर विचार करना आज साहित्य की मांग है | आज आदिवासी जिस दौर से गुजर रहा है , वह उसके लिये जिंदगी की जंग का दौर है | आज नीति निर्माण में , देश के विकास की अवधारणा में आदिवासी समाज तथा उसकी परिवेशगत परिस्थितियों को ध्यान में न रखना सबसे बड़ी विडम्बना है | मुख्यधारा का साहित्य , सूचना तंत्र व मीडिया की नज़र में आदिवासी की समस्या का कोई मुद्दा ही नहीं हैं जिसके लिए उसे जगह दी जा सकें | एक तरह से आदिवासी अकेला है | इसलिए आदिवासी विषयों पर साहित्य सृजन तथा शोधकार्य करना आज के समय की मांग है | जल , जंगल , जमीन के संरक्षण और रक्षा का सवाल आदिवासियों के जीवन से जुडा हुआ है | यदि आदिवासी को बचाना है , उसके होने को संभव बनाना है ,तो जल , जंगल , जमीन को बचाना होगा | तब ही हम आदिवासी समाज व सभ्यता , संस्कृति , भाषा , बोली आदि को बचा सकते है | इसके साथ ही हम प्रकृति को भी संवर्धित व संरक्षित कर सकते है | आदिवासी बचेगा तो हम उसके मौखिक साहित्य को भी लिखित रूप दे सकते है | क्योंकि अधिकतर आदिवासियों का साहित्य पीढ़ी दर पीढ़ी एक - दूसरे को हस्तांतरित किया जाता है | जो मौखिक रूप से ही हस्तांतरित होता है |

अतः प्रस्तुत शोध - पत्र का उद्देश्य जल , जंगल , जमीन और आदिवासी के अंतर्संबंधों तथा वर्तमान में इससे सम्बन्धित समस्याओं के विविध आयामों पर विचार करना तथा उक्त मुद्दों पर शोधपरक अनुशीलन करना है , जो पूर्णत: प्रासंगिक है |

आदिवासी ने अपने प्रकृति प्रदत जीवन के आधार पर जल , जंगल व जमीन की कीमत को पहचाना है , उसे पूजा है व समृद्ध किया है , उसी की अनुमति से उससे जीवन चलाया है , पर कभी नुकसान नहीं पहुँचाया है | लेकिन आज की साम्राज्यवादी , पूंजीवादी और उपभोक्तावादी सोच में ऐसा नहीं है | जिस तरह आदिवासी जल , जंगल , जमीन पर निर्भर है उस रूप में तथाकथित सभ्य समाज जंगल पर निर्भर नहीं है , फिर भी जंगलों को बर्बाद किये बिना उसकी इच्छाएं पूरी नहीं हो पा रही है | वह जल , जंगल , जमीन और आदिवासियों की अस्मिता की कीमत पर पूंजीवादी खेल को खेलना चाहते है | आदिवासी क्षेत्र के जल , जंगल व जमीन को देखते ही इनकी लूट की भूख बढ़ जाती है |

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

उन्हें वहां अरक्षित , बिना रखवालों का खजाना दिख जाता है | यदि सरकार का आशीर्वाद इन्हें मिल जाए तो फिर यह उनके लिये लूट का ख़जाना ही है | आज विकास के नाम पर देश की बेसकीमती जमीन और जंगल के दलालों की गिरफ्त में है | ग्रामीण और आदिवासियों की जान मुट्ठी में है | आज देश के आदिवासियों की जल , जंगल , जमीन पर विकास के नाम पर सरकारे भी आदिवासियों से छिनकर बड़े – बड़े उधोगपतियों , पूंजीपतियों , निजी कंपनियों , सरकारी संस्थाओं को कीमती जमीन कोडी के भाव दे रही है | साथ ही जंगलों की अंधाधुंध कटाई करके जंगलों व पहाड़ों को समतल करके कंकरीट के जंगल व घरोदें बनाये जा रहे है और आदिवासियों को उनकी जगह से विस्थापित किया जा रहा है | वे जन्मों / वर्षों से जिस जगह पर रहते थे वहां से पलायन करने को मजबूर किया जा रहा है | उन्हें वहां से डरा – धमका कर भगाया जा रहा है | आज आदिवासी पर इस प्रकार की अनेक समस्याएं आने से वह अपनी वर्चस्व की लड़ाई लड़ रहा है , लेकिन आज कोई भी उसकी बात सुनने को तैयार नहीं है | वह लालायित है कि आज उसकी सहायता कौन करेगा ? वह कुदरत के भरोसे रहकर न्याय की आस लगा रहा है |

निष्कर्ष – अतः कहा जा सकता है कि जल , जंगल व जमीन के बिना आदिवासियों के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है | यदि आदिवासियों को उनकी जमीन से बेदखल किया जाता है तो इसका मतलब है कि – एक आदिवासी कौम का, एक संस्कृति , परम्परा , समाज , भाषा का विनाश है | सरकारों के विकास के चरणों में आदिवासियों की परिस्थितियों और मानसिकता को ध्यान में न रखने के कारण विकास की वर्तमान अवधारणा आदिवासियों के लिये अभिशाप बन गई है | अनेक परियोजनाओं और विकास के नाम पर आदिवासियों की जमीनों को छीनकर , अवैध खनन व भू - माफियाओं को खुली छूट देकर आदिवासियों को बेदखल करना , उन पर हिंसात्मक कार्यवाहियाँ करवाना व करना , विस्थापित और पलायन के लिये मजबूर करना, उन्हें जल , जंगल , जमीन व खेती से विहीन करना वर्तमान की ऐसी सच्चाई है जिसे नकारा नहीं जा सकता है | इसके चलते देश के पर्यावरण संतुलन को भी भारी नुकसान हो रहा है | मूलतः जल , जंगल व जमीन से बेदखल करके आदिवासी और आदिवासी सभ्यता , संस्कृति को जिन्दा नहीं रखा जा सकता है | जिससे सम्पूर्ण पृथ्वी पर मानव जाति व अन्य जीवों को अनेक दुष्परिणाम भुगतने पड सकते है | इसलिये आदिवासियों की सुरक्षा करने से सम्पूर्ण मानव जाति तथा अन्य जीव भी सुरक्षित रह सकते है | अन्यथा सभी को परिणाम भुगतने होंगे |

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

संदर्भ ग्रन्थ : –

1. आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी – गुप्ता, डॉ. रमणिका |
2. आदिवासी साहित्य विमर्श : चुनौतियाँ और संभावनाएँ – मीना, **डॉ. गंगा** सहाय |
3. आदिवासी विमर्श के रोडे – मीणा, केदार प्रसाद |
4. **अस्मिता ही नहीं अस्तित्व का सवाल – मीणा, हरिराम |**
5. **आदिवासी चिन्तन की भूमिका – सहाय, गंगासिंह |**
6. **आदिवासी समाज : दशा और दिशा** – मीना, डॉ. रमेश चन्द |
7. **नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द** – पुतुल, निर्मला |
8. **आदिवासी विकास से विस्थापन** – गुप्ता, रमणिका |
9. **आदिवासी साहित्य यात्रा** – गुप्ता, रमणिका |
10. **आदिवासी दर्शन और साहित्य** – टेटे , वन्दना |
11. **आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी** – गुप्ता, रमणिका |
12. **आदिवासी विमर्श** – मीना, डॉ. रमेश चन्द |
13. **आदिवासी दस्तक : विचार परम्परा और साहित्य** – मीना, डॉ. रमेश चन्द |
14. **समकालीन आदिवासी कविता – मीणा, हरिराम |**
15. **आदिवासी साहित्य विविध आयाम – संभाजी,** डॉ. रमेश |

हरिप्रकाश परमार

(शोधार्थी – हिन्दी विभाग)

माधव विश्वविद्यालय , पिण्डवाड़ा (सिरोही) राजस्थान